E-Newsletter

विपश्यना

साधकों का
मासिक प्रेरणा पत्र

वार्षिक शुल्क रु. ३०/-
आजीवन शुल्क रु. ५००/-

बुद्धवर्ष 2563, वैशाख महाशिविर विशेषांक, 3 मई, 2020, वर्ष 49, ऑनलाइन अंक

For online Patrika in various languages, visit: http://www.vridhamma.org/Newsletter_Home.aspx

धम्मवाणी

अस्सो यथा भद्रो कसानिविट्ठो, आतापिनो संवेगिनो भवाथ।
सद्धाय सीलेन च वीरियेन च, समाधिना धम्मविनिच्छयेन च।
सम्पन्नविज्जाचरणा पतिस्सता, जहिस्सथ दुक्खमिदं अनप्पकं॥

धम्मपद-144, दण्डवग्गो

– चाबुक खाये उत्तम घोड़े के समान संविग्न होकर उद्योगशील और क्रियाशील बनो। श्रद्धा, शील, वीर्य, समाधि और धर्म-विनिश्चय से युक्त हो विद्या एवं आचरण से संपन्न और स्मृतिमान बन इस महान दुःख(-समूह) का अंत करो।

उद्‌बोधन:

धर्म धारण करें

मेरे प्यारे साथी साधक-साधिकाओ!

आओ! धर्म धारण करें!

धर्म धारण करने में ही सच्चा कल्याण है।

धर्म चर्चा लाभप्रद भी हो सकती है, लाभप्रद नहीं भी हो सकती है और कभी-कभी हानिप्रद भी हो सकती है।

धर्म चिंतन लाभप्रद भी हो सकता है, लाभप्रद नहीं भी हो सकता है और कभी-कभी हानिप्रद भी हो सकता है।

परंतु धर्म धारण करना तो निश्चितरूप से लाभप्रद ही लाभप्रद है।

धर्म चर्चा करके धर्म के बारे में श्रुत-ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है।

विपश्यना साधना संबंधी तत्काल जानकारी हेतु निम्न शृंखलाओं (लिंक्स) का अनुसरण (क्लिक) करें--

विपश्यना विशोधन विन्यास (VRI) की संपूर्ण जानकारी हेतु – *www.vridhamma.org*

- यू-ट्यूब (YouTube) – विपश्यना ध्यान की सदस्यता लें- *https://www.youtube.com/user/VipassanaOrg*
- ट्विटर (Twitter) – *https://twitter.com/VipassanaOrg*
- फेसबुक (Facebook) – https://www.facebook.com/Vipassanaorganisation
- इंस्टाग्राम (Instagram) – *https://www.instagram.com/vipassanaorg/*
- Telegram Group for Students – https://t.me/joinchat/NDyAiVWMvR1GHuW8RKcKkw

"विपश्यना साधना मोबाइल ऐप" डाउनलोड करें:

गूगल एंड्रॉयड: *https://play.google.com/store/apps/details?id=com.vipassanameditation*
एप्पल iOS: *https://apps.apple.com/in/app/vipassanameditation-vri/id1491766806*

विपश्यी साधकों की सुविधा के लिए:

"विपश्यना साधना मोबाइल ऐप" पर रोज़ाना सामूहिक साधना का सीधा प्रसारण होता है--

समय: प्रतिदिन सुबह **8:00 बजे से 9:00** बजे तक; दोपहर **2:30 से 3:30** बजे; शाम **6:00 से 7:00** बजे (IST + 5.30GMT)
और अतिरिक्त सामूहिक साधना – **प्रत्येक रविवार** को।

अन्य लोगों को भी भय और चिंता से निपटने के लिए एक प्रभावी उपकरण के रूप में VRI '**आनापान' ध्यान** करने की सलाह देता है। इस सार्वजनीन 'आनापान' का अभ्यास करने के लिए :

i) उपरोक्त प्रकार से 'विपश्यना साधना मोबाइल ऐप' डाउनलोड करें और उसी को चलायें। या
ii) *https://www.vridhamma.org/Mini-Anapana* पर **मिनी आनापान** चलायें।
iii) **ऑनलाइन प्रसारण द्वारा 'सामूहिक आनापान सत्र'** में शामिल होने के लिए निम्न लिंक पर पुराने साधक के रूप में अपने आप को रजिस्टर करें – *https://www.vridhamma.org/register*

- स्कूलों, सरकारी विभागों, निजी कंपनियों और संस्थानों के अनुरोध पर **विशेष समर्पित आनापान सत्र** भी आयोजित किए जाते हैं।

बच्चों के लिए आनापान सत्रः उम्र 8 - 16 वर्ष – VRI ऑनलाइन 70 Min. के आनापान सत्र आयोजित करा सकते हैं। कृपया स्कूलों और अन्य शैक्षणिक संस्थानों के लिए और ऑनलाइन सत्रों की अनुसूची के समर्पित सत्रों के लिए ईमेल – *childrencourse@vridhamma.org* पर पत्र लिखें।

रजि. नं. 19156/71. Postal Regi. No. NSK/RNP-235/2018-2020

यह श्रुतज्ञान हमें प्रेरणा दे, मार्गदर्शन दे और फलत: हम धर्म धारण कर लें तो धर्म चर्चा हमारे लाभ का कारण बन जाती है। परंतु इस श्रुत-ज्ञान से यदि हम केवल बुद्धिविलास करके ही रह जायँ तो धर्म चर्चा हमारे लिए लाभप्रद नहीं होती। यदि कहीं यह श्रुत-ज्ञान हममें ज्ञानी होने का मिथ्या दंभ पैदा कर दे तो उल्टे हमारी हानि का कारण बन सकता है।

यही बात धर्म चिंतन की है। धर्म चिंतन भी चिंतन ज्ञान पैदा करके निरर्थक बुद्धि विलास का कारण बन सकता है। अथवा थोथा दंभ पैदा करके हानि का कारण भी बन सकता है। परंतु यही चिंतन-ज्ञान यदि धर्म धारण करने की प्रेरणा दे, मार्ग दर्शन दे और फलत: हम धर्म धारण कर लें तो हमारे लिये कल्याण का कारण बन सकता है।

सचमुच, कल्याण तो धर्म धारण करने में ही है। मिथ्या बुद्धिविलास में नहीं। मिथ्या दंभ में नहीं।

अत: साधको, आओ! धर्म धारण करें! धर्म धारण कर स्वयं शीलवान बनें! स्वयं समाधिवान बनें! स्वयं प्रज्ञावान बनें! और सही माने में श्रुतवान (सुतवा) बनें!

यही मंगल मूल है।

कल्याण मित्र,

सत्यनारायण गोयन्का

(विपश्यना, वर्ष 3, माघ पूर्णिमा, दि. 06-02-74, अंक 8 से साभार)

पाताल सुत्तं

सुत्त-प्रवचन, धम्मथली, जयपुर, जनवरी 5, 1993.

[पूज्य गुरुजी ने जयपुर के अपने सुत्त-प्रवचन में वेदनासंयुत्त सुत्त की व्याख्या करते हुए संवेदनाओं पर बहुत जोर दिया। इसका अंतिम सुत्त पाताल सुत्त है जिसमें 'असुतवा' और 'सुतवा' शब्दों की व्याख्या की गयी है। सुतवा वह जिसने धर्म को भली प्रकार समझा और समता के साथ संवेदनाओं को देखते हुए अपने सभी प्रकार के दुःखों पर विजय प्राप्त कर ली। असुतवा वह जिसने धर्म को सुना ही नहीं। उसके लिए 'दुःख' एक महासागर के समान है, पाताल जैसा अथाह। पाताल- जिसका कोई तल नहीं, अतल है, अगाध है। आज की परिस्थिति में जबकि हर व्यक्ति कठिनाई में है, विश्व विपश्यना पगोडा के महाशिविर में भी भाग नहीं ले सकते, तब अपने स्थान पर ही साधनारत रह कर पूज्य गुरुदेव की वाणी से लाभान्वित हो सकें, इसी उद्देश्य से यहां इस सुत्त का चयन किया गया है। साधक यदि सचमुच 'सुतवा' बन सकें तो निश्चित ही उनके आचरण से प्रेरणा पाकर अन्य लोग भी धर्म की ओर आकर्षित होंगे। (सं.)]

सुत्तारंभः *"अस्सुतवा, भिक्खवे, पुथुज्जनो यं वाचं भासति – 'अत्थि महासमुद्दे पातालो'ति। तं खो पनेतं, भिक्खवे, अस्सुतवा पुथुज्जनो असन्तं अविज्जमानं एवं वाचं भासति – 'अत्थि महासमुद्दे पातालो'।*

पातालो – जिसका कोई तल नहीं, अतल है, अगाध है, कहीं पांव टिकाने को जगह नहीं। एक आदमी ऐसा कहता है कि मैं ऐसे समुद्र में डूब गया, ऐसे महासमुद्र में डूब गया जो चारों ओर इतना गहरा, इतना गहरा कि उसमें कहीं पांव टिकाने के लिए जगह नहीं। यह तो अतल है, यह तो अगाध है। ऐसा कौन कहता है? जो असुतवा है, जिसने कभी (धर्म) सुना ही नहीं।

मुक्ति-पथ का सबसे पहला कदम होता है कि धर्म सुने तो सही। जिस बेचारे ने धर्म कभी सुना ही नहीं, वह धर्म के नाम पर न जाने कैसे साम्प्रदायिक जंजालों में सारा जीवन बिता देगा, न जाने कैसे कर्मकांडों में सारा जीवन बिता देगा, न जाने कैसी दार्शनिक मान्यताओं में सारा जीवन बिता देगा? वह बाहर निकलेगा ही कैसे? क्योंकि बात सुनी ही नहीं उसने। तो असुतवा और सुतवा, इन दोनों में बहुत बड़ा अंतर है। असुतवा, अश्रुतवान, जिसने कभी सुना ही नहीं। और सुतवा, जिसने सुना है, (धर्म को आचरण में उतारा है।) *अस्सुतवा, भिक्खवे, पुथुज्जनो*। ऐसा व्यक्ति पुथुज्जन माने पृथग्जन है, धर्म के रास्ते चल ही नहीं रहा। सुना ही नहीं तो चलेगा कैसे, पृथग्जन है, धर्म से पृथक है, तो उसको पुथुज्जन कहा। *पुथुज्जनो,* ऐसा व्यक्ति ही ऐसी बात बोलेगा, क्या बोलेगा? *अत्थि महासमुद्दे पातालो*– अरे! यह महासमुद्र है, ऐसा महासमुद्र है, जिसका कोई तल नहीं– ऐसी बात कोई मूर्ख आदमी ही बोलेगा।

तं खो पनेतं, भिक्खवे, अस्सुतवा पुथुज्जनो असन्तं अविज्जमानं एवं वाचं भासति। ऐसा व्यक्ति जो बोल रहा है, वह झूठ बोल रहा है, क्योंकि वह सच को जानता ही नहीं। *असन्तं अविज्जमानं* – जो सही नहीं है, ऐसी बात बोल रहा है– *'अत्थि महासमुद्दे पातालो'*, इस महासमुद्र का कोई तल नहीं। तो कहते हैं कि ऐसा क्यों बोलता है, कब बोलता है? तो समझाते हैं - *सारीरिकानं खो एतं, भिक्खवे, दुक्खानं वेदनानं अधिवचनं यदिदं 'पातालो'ति*। अधिवचनं – यह उसका पर्यायवाची शब्द है, यानी इसका यह अर्थ है। शरीर पर होने वाली ये जो दुःखद संवेदनाएं हैं, इन्हीं को वह पाताल कह रहा है।

होता क्या है– एक आदमी के जीवन में बड़ी अनचाही घटनाएं घटी जा रही हैं, अनचाही ही अनचाही घटनाएं घटी जा रही हैं, बड़ा व्याकुल, बड़ा व्याकुल। तो कहता है कि इस व्याकुलता के समुद्र में डूब गया, मुझे तो कुछ दिखता ही नहीं, मेरा पांव कहीं टिकता ही नहीं। जब कोई व्यक्ति ऐसा कहता है तो उसको अपना दुःख अनन्त मालूम होता है। उसको वह दुःख अतल-स्पर्शी मालूम होता है, अगाध मालूम होता है, अगाध समुद्र की तरह। जीवन में जब-जब शरीर पर दुःखद संवेदनाएं आती हैं, जीवन में जब-जब अप्रिय घटनाएं घटती हैं, जीवन में जब-जब हमारे दुष्कर्म अपना फल देते हैं, तब-तब मानस के स्तर पर हम बड़े व्याकुल हो जाते हैं, उस समय सारे शरीर में दुःखद संवेदनाएं चलती हैं। ऐसा व्यक्ति यदि दुःखद संवेदनाओं को देखना नहीं जानता, तो वह केवल अपने मानस के दुःख में डूबा है—हाय रे! यह हो गया रे। मेरा धन चला गया रे। मेरा अमुक हो गया रे, मेरा अमुक हो गया रे। उसी में रोये जा रहा है, रोये जा रहा है, रोये जा रहा है। अपनी संवेदनाओं को देखता नहीं, तब उसको पांव टिकाने के लिए कोई जगह ही नहीं मिलती। तब उसको सारा कुछ अगाध ही अगाध मालूम होता है। सारा दुःख ऐसा मालूम होता है कि इससे छुटकारा होगा ही नहीं; कहीं कोई जमीन मिलेगी ही नहीं पांव टिकाने के लिए। "मैं तो इसी तरह इस दुःख में रहूंगा" – यों उसके मानस में ऐसे विचार आने लगते हैं क्योंकि वह असुतवा है, उसने धर्म कभी सुना ही नहीं। उसके शरीर पर जो दुःखद संवेदनाएं चलती हैं, इसी को वह पाताल कह रहा है। ...

'अस्सुतवा, भिक्खवे, पुथुज्जनो सारीरिकाय दुक्खाय वेदनाय फुट्ठो समानो'– जब शरीर पर होने वाली उन संवेदनाओं का स्पर्श होता है, और मन ही मन स्पर्श तो होता ही रहता है, ऊपर-ऊपर से तो बाहर क्या घटना घटी उसी के मारे दुःखी है, लेकिन मन ही मन, भीतर-भीतर स्पर्श हुए जा रहा है, सारे शरीर में इन दुःखद संवेदनाओं का स्पर्श हो रहा है, तब – *सोचति*, बड़ी चिंता में डूब जाता है; *किलमति*, बड़ा व्याकुल हो जाता है; *परिदेवति*, बहुत रोता है; *उरत्ताळिं,* छाती पीट-पीट कर रोता है; *कन्दति*, क्रन्दन करता है; *सम्मोहं आपज्जति*, इस प्रकार और मोह में डूबता चला जाता है, डूबता चला जाता है। उसे होश नहीं है कि क्या हो रहा है और कैसे इसके बाहर निकला जाए, तो वह अपने दुःखों को बढ़ाने के काम में ही लगा रहता है।

अयं वुच्चति, भिक्खवे, 'अस्सुतवा पुथुज्जनो पाताले न पच्चुट्ठासि, गाधञ्च नाज्झगा'। ऐसे व्यक्ति की यह अवस्था है, क्योंकि वह पृथग्जन है, क्योंकि वह असुतवा है, उसने कभी धर्म सुना ही नहीं, तो जानता ही नहीं अब क्या करूं मैं। ऐसे व्यक्ति का दुःख, जैसे वहां उसको पांव टिकाने के लिए जगह ही नहीं है, अगाध हो गया उसके लिए, अतल-स्पर्शी हो गया उसके लिए, कहीं पांव टिकाने की जगह नहीं।

फिर कहते हैं - *सुतवा च खो, भिक्खवे* – लेकिन जो श्रुतवान है, जिसने सुना है धर्म को, समझा है धर्म को। *अरियसावको* – ऐसा आर्य श्रावक आर्य मार्ग पर चलने लगा। *अरियसावको सारीरिकाय दुक्खाय वेदनाय फुट्ठो समानो* – ऐसा क्यक्ति जब इस प्रकार दुःखद संवेदनाओं के स्पर्श को अनुभव करता है अपने शरीर पर, तब – *नेव सोचति*, वह चिंतित नहीं होता; *न किलमति,* व्याकुल नहीं होता; *न परिदेवति*, रोता नहीं; *न उरत्ताळिं कन्दति*, न छाती पीट कर क्रन्दन करता है; *न सम्मोहं आपज्जति*, ऐसा व्यक्ति मोह में नहीं डूबता, अविद्या में नहीं डूबता।

अयं वुच्चति, भिक्खवे – इसी को कहते हैं - *'सुतवा अरियसावको पाताले पच्चुट्ठासि',* दुःख का महासमुद्र आया लेकिन उसमें तलस्पर्शी जगह मिल गई, उसको पांव टिकाने की जगह मिल गई; *'गाधञ्च अज्झगा'*, अब अगाध नहीं रहा उसके लिए दुःख, उसको पांव टिकाने की जगह मिल गई। क्या पांव टिकाने की जगह मिल गई? ये जो संवेदनाएं हैं, यही पांव टिकाने की जगह हैं। इनको जब तक नहीं देखता तब तक अगाध ही अगाध है, हाय रे! मर गया रे। मेरा यह हो गया रे, मेरा वह हो गया रे। मानस के स्तर पर रोये ही जा रहा है, रोये ही जा रहा है, रोये ही जा रहा है।

अरे! जब ये सारी मुसीबतें आईं, अनचाही घटनाएं घटीं, तब तेरा काम था पांव टिकाने की जगह ढूंढ़े। चारों ओर अगाध समुद्र तुझे दिखाई दे रहा है, पांव टिकाने की जगह चाहिए, तो संवेदनाएं हैं न। उस दुःख में ये संवेदनाएं तेरी मदद करेंगी, इनको देखना शुरू कर देगा तो पांव टिकाने की जगह मिल गई। इसको देखते, देखते, देखते, इस दुःख के महासागर के बाहर निकल जायगा। यह साधकों के लिए बहुत आवश्यक है।

परंतु जब बहुत 'सुख' होता है तब भी विपश्यना वगैरह सारी बातें भूल जाते हैं और उसी में रौल करने लगते हैं। इसी तरह बहुत 'दुःख' होता है तब भी विपश्यना वगैरह सब भूल जाते हैं। हाय रे! मरा रे! मुझको ऐसा हो गया रे, मुझको ऐसा हो गया रे! अरे! इसी समय तो धर्म की आवश्यकता है तुझे, तूने विपश्यना की है, शरीर की संवेदनाओं की अनुभूति सीखी है, और अब तो दुःखद संवेदनाओं की अनुभूति और सरल हो गयी है। इसी को देख भाई! इसी को देख भाई! तो श्रावक अच्छी तरह धर्म को सुनकर के, समझकर के काम करने वाला हो गया। उसको आधार मिल गया दुःखमुक्ति का, पांव टिकाने का आधार मिल गया। आधार ये संवेदनाएं ही हैं।

यो एता नाधिवासेति, उप्पन्ना वेदना दुखा।
सारीरिका पाणहरा, याहि फुट्ठो पवेधति॥

सारीरिका, शरीर की ये संवेदनाएं; *पाणहरा*, मराणान्तक संवेदनाएं, मृत्यु के समय जितनी दुःखद संवेदनाएं होती हैं, ऐसी संवेदना हुए जा रही है। क्योंकि सारी घटनाएं हमारे प्रतिकूल हो रही हैं, तो उतना ही बड़ा दुःख हो रहा है, मरणान्तक पीड़ा हो रही है शरीर पर। *याहि फुट्ठो पवेधति,* उसके स्पर्श से भेदन हुए जा रहा है, भीतर ही भीतर भेदन हुए जा रहा है, बहुत बुरा हाल है। *यो एता नाधिवासेति*, उसके साथ रहना नहीं आता उसे, तो रोये ही जा रहा है। अरे! ये जो वेदनाएं हैं, इनके साथ जीना सीख। इनको भोक्ताभाव से भोगने से छुटकारा नहीं होगा, इनको द्रष्टाभाव से देखने लगोगे, तब उनके साथ जीना आ गया। *न अधिवासेति,* नहीं तो जीना नहीं आया। *उप्पन्ना वेदना दुक्खा,* दुःखद वेदना जागी, और उसके साथ जीना नहीं आया उसको, उसे स्वीकार करना नहीं आया। तब क्या करता है?

अक्कन्दति परोदति, दुब्बलो अप्पथामको।
न सो पाताले पच्चुट्ठासि, अथो गाधम्पि नाज्झगा॥

अक्कन्दति परोदति, क्रन्दन करता है, रुदन करता है; *दुब्बलो अप्पथामको,* बड़ा दुर्बल हो जाता है, हाय रे! मेरा क्या होगा रे, मेरा क्या होगा रे? *अप्पथामको,* अपने मानस की सारी स्थिरता खो देता है, अस्थिर चित्त हो जाता है। *न सो पाताले पच्चुट्ठासि,* उसको पाताल में, इस महान दुःख के सागर में खड़ा होने के लिए कहीं जगह नहीं मिलती। *अथो गाधम्पि न अज्झगा,* यह अगाध है, इसमें कोई गाध नहीं मिलता, पांव टिकाने के लिए कोई जगह नहीं मिलती ऐसे व्यक्ति को, तब वह दुःख में ही डूबा रहता है। फिर कहते हैं --

यो चेता अधिवासेति, उप्पन्ना वेदना दुखा।
सारीरिका पाणहरा, याहि फुट्ठो न वेधति।
स वे पाताले पच्चुट्ठासि, अथो गाधम्पि अज्झगा॥

यो चेता अधिवासेति, उप्पन्ना वेदना दुखा, अब दूसरे तरह का व्यक्ति, जो सुतवा है, जो धर्म के रास्ते चल रहा है, धर्म को समझे हुए है। उस व्यक्ति के *'उप्पन्ना वेदना दुखा'*, उसके जीवन में भी भिन्न-भिन्न प्रकार के दुःख आए, और भिन्न-भिन्न प्रकार के दुःख जागने के कारण भिन्न-भिन्न प्रकार की संवेदनाएं आईं, ऐसा व्यक्ति उन दुःखद संवेदनाओं के साथ जीना सीख गया। *यो चेता अधिवासेति* – उसी के साथ उसको सहन करना, उसको स्वीकार करना, उसके साथ रहना सीख गया। जबकि वह वेदना उतनी ही है? उसको भी उतनी ही– *सारीरिका पाणहरा* – प्राणों को हर लेगी, ऐसी मरणान्तक पीड़ा हो रही है, और जब वे स्पर्श करती हैं, उतना ही भेदन करती हैं कि उसे व्याकुल बना दें, *याहि फुट्ठो न वेधति* –फिर भी वह व्याकुल नहीं होता। *स वे पाताले पच्चुट्ठासि,* भले यह अगाध दुःखों का सागर है, फिर भी उसको तल मिल जाता है, पांव टिकाने के लिए मानों उसे तलस्पर्शी भूमि मिल गई, पाताल हो तो भी उसको पांव टिकाने के लिए भूमि मिल गई। *अथो गाधम्पि अज्झगा,* उसे गाध प्राप्त हो गया। अगाध में गाध प्राप्त हो गया, अगाध दुःखों में डूबा हुआ था, अब उसको गाध मिल गया, सहारा मिल गया। तो ये संवेदनाएं ही सहारा हैं।

बार-बार, बार-बार भगवान ने संवेदनाओं को इतना महत्त्व दिया। उनके पहले भी, उनके बाद भी, भारत में अनेक प्रकार की साधनाएं थीं, भारत में अनेक प्रकार का अच्छा चिंतन चलता था—कि हमें राग-द्वेष नहीं करना चाहिए, यह कोई बुद्ध की देन नहीं, यह तो उनके पहले भी था, उनके बाद भी था। आंखों से रूप देखो तो न उससे राग करो, न द्वेष करो, पहले भी था। कान से शब्द सुनो तो न उससे राग करो, न द्वेष करो, पहले भी था। नाक से गंध सूंघो तो, न राग करो, न द्वेष करो; जीभ पर रस आए तो न राग करो, न द्वेष करो; त्वचा पर कोई स्पर्श आए, तो न राग करो, न द्वेष करो; मन में चिंतन आए तो...ये बातें पहले भी थीं, बाद में भी थीं।

बुद्ध ने क्या ढूंढ़ निकाला? यह जो राग-द्वेष जागता है, और हमारी इंद्रियों पर बाहरी आलम्बनों का स्पर्श होता है, इनके बीच में एक कड़ी और है। इंद्रियों पर आलंबनों का स्पर्श होते ही संवेदना होती है। वह संवेदना नहीं हो तो सब अगाध ही अगाध होगा। ऊपर-ऊपर से हज़ार कहता रहे, पांव टिकाने के लिए जगह नहीं मिलेगी उसे। और संवेदनाओं के सहारे चलेगा तो पांव टिकाने की जगह मिल गई। अब इस पर पांव टिका कर के व्याकुल नहीं होगा, अपना धीरज नहीं खोयेगा, सामना करेगा और बाहर निकल ही आयेगा। कोई दुःख ऐसा

• रजि. नं. 19156/71. Postal Regi. No. NSK/RNP-235/2018-2020

नहीं होता जो अनन्त काल तक बना रहे, कोई तूफान ऐसा नहीं होता जो अनन्त काल तक बना रहे। अनन्त नहीं है, यह अनित्य है, यह शाश्वत नहीं है, यह ध्रुव नहीं है, यह बदलने वाला है, यों एक हिम्मत आती है। उसके सहारे, सहारे, सहारे सांसारिक दुःखों के बाहर आते-आते, वह सारे भव-चक्र के दुःखों के बाहर निकल जाता है। बड़ा कल्याण का मार्ग है। वेदनाओं को छोड़ देंगे तो ऊपरी-ऊपरी बात रह जायगी, शारीरिक वेदनाओं के साथ काम करेंगे, तो सारे दुःखों के बाहर निकल ही जायेंगे। कितने ही दुःख में क्यों न हों, शरीर पर होने वाली इन संवेदनाओं को देखना सीखें, दुःखों के बाहर निकल ही जायँगे, और दुःखों से मुक्ति प्राप्त हो ही जायगी।

भवतु सब्ब मङ्गलं। भवतु सब्ब मङ्गलं। भवतु सब्ब मङ्गलं॥

धर्मयात्रा के दौरान कुशीनगर की एक घंटे की सामूहिक साधना के अंत में विश्व कल्याण के लिए पूज्य गुरुजी ने मंगल मैत्री देते हुए जो **सत्यक्रिया** की, उसकी एक झलक :—

एक शरण है बुद्ध की, और शरण नहिं कोय।
सत्य वचन के तेज से, सत्य वचन के तेज से,
सत्य वचन के तेज से, धरम उजागर होय॥

एक शरण है धरम की, एक शरण है धरम की,
एक शरण है धरम की, और शरण नहिं कोय।
सत्य वचन के तेज से, सत्य वचन के तेज से,
सत्य वचन के तेज से, धरम प्रसारित होय॥

एक शरण है संघ की, एक शरण है संघ की,
एक शरण है संघ की, और शरण नहिं कोय।
सत्य वचन के तेज से, सत्य वचन के तेज से,
सत्य वचन के तेज से, धरम प्रतिष्ठित होय॥
सबका मंगल होय, सबका मंगल होय॥...

धन-धन धरती धरम की, धन धन मंगल देश।
शुद्ध धरम जागे यहां, कटें जगत के क्लेश॥

धन-धन धरती धरम की, धन धन पावन देश।
शुद्ध धरम फिर से जगे, कटें जगत के क्लेश॥

सबका मंगल, सबका मंगल, सबका मंगल होय रे।....

(शेष मैत्री के बोल पिछले अंक में प्रकाशित हो चुके है। सं.)

दोहे धर्म के

भला होय सब जगत का, सुखी होंय सब लोग।
दूर होंय दारिद्र दुख, दूर होंय सब रोग॥
दुखियारे दुखमुक्त हों, भय त्यागें भयभीत।
बैर छोड़ कर लोग सब, करें परस्पर प्रीत॥
सुख ब्यापे संसार में, दुखिया रहे न कोय।
ना कोई भयभीत हो, ना भवरोगी होय॥
ना कोई व्याकुल होय, ना दुख-कातर होय।
सब का मंगल होय, सबका मंगल होय॥

केमिटो टेक्नोलॉजीज (प्रा0) लिमिटेड
8, मोहता भवन, ई-मोजेस रोड, वरली, मुंबई- 400 018
फोन: 2493 8893, फैक्स: 2493 6166
Email: arun@chemito.net
की मंगल कामनाओं सहित

दूहा धरम रा

देख दुखी करुणा जगै, देख सुखी मन मोद।
सैं रै प्रति मैत्री जगै, रवै धरम रो बोध॥
धरती पर फिर धरम री, मंगळ बरसा होय।
साप ताप सैं रा धुलै, जन जन सुखिया होय॥
द्रोह छोड़ मैत्री करै, क्रोध छोड़ कर प्यार।
सुद्ध धरम ऐसो जगै, सुधरै जग ब्यवहार॥
फिर स्यूं जागै जगत मँह, विपस्सना री जोत।
सब रो मंगळ ही सधै, कुळ छांटै ना गोत॥

मोरया ट्रेडिंग कंपनी
सर्वो स्टॉकिस्ट-इंडियन ऑईल, 74, सुरेशदादा जैन शॉपिंग कॉम्प्लेक्स, एन.एच.6,
अजिंठा चौक, जलगांव - 425 003, फोन. नं. 0257-2210372, 2212877
मोबा.09423187301, Email: morolium_jal@yahoo.co.in
की मंगल कामनाओं सहित

"विपश्यना विशोधन विन्यास" के लिए प्रकाशक, मुद्रक एवं संपादक: राम प्रताप यादव, धम्मगिरि, इगतपुरी- 422 403, दूरभाष :(02553) 244086, 244076.
मुद्रण स्थान : अपोलो प्रिंटिंग प्रेस, 259, सीकाफ लिमिटेड, 69 एम. आय. डी. सी, सातपुर, नाशिक-422 007. बुद्धवर्ष 2563, वैशाख महाशिविर विशेषांक 3 मई, 2020

वार्षिक शुल्क रु. 30/-, US $ 10, आजीवन शुल्क रु. 500/-, US $ 100. "विपश्यना" रजि. नं. 19156/71. Postal Regi. No. NSK/RNP-235/2018-2020

Posting day- **Purnima of Every Month,** Posted at **Igatpuri-422 403,** Dist. Nashik (M.S.) **(फुटकर बिक्री नहीं होती)**

DATE OF PRINTING: Online Special, DATE OF PUBLICATION: 3 MAY, 2020

If not delivered please return to:-
विपश्यना विशोधन विन्यास
धम्मगिरि, इगतपुरी - 422 403
जिला-नाशिक, महाराष्ट्र, भारत
फोन : (02553) 244076, 244086,
244144, 244440.
Email: vri_admin@vridhamma.org;
course booking: info@giri.dhamma.org
Website: www.vridhamma.org